वर्तमान समाज तथा साहित्य में किन्नरों की बढ़ती भूमिका

बीज शब्द : *किन्नर, किन्नर समाज, प्रदीप सौरभ, 'तीसरी ताली', लक्ष्मी नारायण त्रिपाठी, 'मैं लक्ष्मी मैं हिजड़ा', वर्तमान समाज तथा साहित्य में किन्नरों की बढ़ती भूमिका।*

ISSN 0975 1254 (PRINT)
ISSN 2249-9180 (ONLINE)
www.shodh.net
A Refereed Research Journal
And a complete Periodical dedicated to
Humanities & Social Science Research
शोध संचयन

किन्नरों की हमारे समाज में तब से मौजूदगी रही है जब से मनुष्य जन्मे हैं। किंतु इनकी चर्चा अगर मोटे तौर पर देखें तो महाभारत के समय में दिखती है। महाभारत में शिखण्डी नामक किन्नर भीष्म पितामह की हत्या का कारण बनी और अपनी वर्षों पहले की प्रतिज्ञा पूरी की।...यदि किन्नरों की स्थिति पर विचार किया जाए तो समाज में प्राय: दो तरह से लोग किन्नर बनते हैं- एक जो जन्मजात किन्नर होते है और दूसरे वे जिन्हे जबरदस्ती या अपनी मर्जी से बनाया जाता है।... साहित्य में प्रदीप सौरभ द्वारा लिखी 'तीसरी ताली' नामक किताब ने तो धूम मचाई थी ही किंतु अब लक्ष्मी नारायण त्रिपाठी द्वारा लिखी आत्मकथा 'मैं लक्ष्मी मैं हिजड़ा' ने भी तहलका मचा दिया है।

सविता शर्मा
(शोधार्थी)
भारतीय भाषा केंद्र
जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय
नई दिल्ली

किन्नरों की हमारे समाज में तब से मौजूदगी रही है जब से मनुष्य जन्मे हैं। किंतु इनकी चर्चा अगर मोटे तौर पर देखें तो महाभारत के समय में दिखती है। महाभारत में शिखण्डी नामक किन्नर भीष्म पितामह की हत्या का कारण बनी और अपनी वर्षों पहले की प्रतिज्ञा पूरी की। इसी प्रकार अर्जुन भी 13 वर्ष के वनवास में से 1 वर्ष के अज्ञातवास में किन्नर ही बनते हैं और अपनी पहचान छुपा पाते हैं। यही नहीं बल्कि प्राचीन राजाओं के दरबार में भी किन्नर अक्सर नांच-गाने, श्रृंगार आदि कलाओं से जुड़े रहे। किंतु बड़े ही आश्चर्य की बात है कि इनकी चर्चा हम फिर भी उस प्रकार समाज में नहीं कर पाते जिस प्रकार करनी चाहिए।

यदि किन्नरों की स्थिति पर विचार किया जाए तो समाज में प्राय: दो तरह से लोग किन्नर बनते है- एक जो जन्मजात किन्नर होते है और दूसरे वे जिन्हे जबरदस्ती या अपनी मर्जी से बनाया जाता है।

हैरानी की बात तो यह है कि कृत्रिम रूप से बनाए गए किन्नरों की संख्या जन्मजात किन्नरों से कहीं अधिक है, प्रश्न उठता है कि कृत्रिम रूप से किन्नर बनाने का क्या कारण है? इसकी एक वजह तो यह हो सकती है कि किन्नरों के भी इलाके होते हैं। जिस कारण हर इलाके की सत्ता के पीछे संघर्ष होता है और सबकी सत्ता चलती रहे, उसके लिए एक उत्तराधिकारी चाहिए होता है जो उस गद्दी पर बैठे और इस तरह यह परम्परा लम्बे समय से चलती ही आ रही है या यों कहें कि यह इनकी जरूरत भी है।

इसकी दूसरी वजह यह भी हो सकती है कि कई गरीब लोग बेरोज़गारी या गरीबी के वशीभूत होकर जानबूझ कर किन्नर बनते हैं, क्योंकि इससे इनका जीवन आराम से कट जाता है।

प्रश्न उठता है कि आखिर समाज में इनकी स्थिति इतनी खराब क्यों है और इस पर अब तक कोई विशेष विमर्श या वाद-विवाद करने की कोई खास पहल भी नहीं दिखती है। दरअसल शिक्षा तथा आर्थिक क्षेत्र में पिछड़ने के कारण यह लोगों की खुशियों में नांच-नांचकर तथा ट्रैफिक सिगनलों पर भीख माँग कर, तो कई वैश्यावृति करने को मजबूर हैं। शिक्षा का अभाव स्वयं किन्नरों में तो है ही साथ ही हमारे समाज में भी इनके प्रति कोई सकारात्मक नज़रिया नहीं है। कई परिवार तो अपने बच्चों को इनका डर दिखा कर ज्यादा बाहर खेलने या इनके पास जाने से भी डराते हैं। अक्सर बच्चे किन्नरों से डरते हैं और माता-पिता भी यह कह देते हैं कि- तुझे उठा ले जाएंगे अपने साथ। किन्तु क्या इनके प्रति हमारा यह नज़रिया ठीक है? क्या अब हमें यह नहीं

सोचना चाहिए कि किन्नरों की इस हालत का जिम्मेदार जितना यह समाज है उतने हम भी? आखिर क्या वजह है कि स्कूलों में इनके दाखिले लगभग नगण्य ही हैं? क्या इसका एक कारण यह नहीं कि स्कूल में दाखिले के समय माता-पिता के नाम से लेकर पूरी प्रक्रिया इनके खिलाफ जाती है। आखिर ऐसा क्यों है कि कोई किन्नर अपने असली परिवार के साथ उसी आम तरीके से क्यो नहीं रह पाता जैसे बाकी बच्चे रहते हैं? क्या इसके पीछे हमारा और स्वयं इनके अंदर हमारे द्वारा भरी हीन भावना जिम्मेदार नहीं है?

हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि ये किन्नर भी हमारी ही तरह इंसान हैं केवल इनकी अप्रजनन क्षमता ही इन्हें हमसे अलग करती है किन्तु दुनियॉ में ऐसे कई लोग हैं जो अप्रजननता के शिकार हैं तो हम उनसे तो कभी इस प्रकार का दोहरा व्यवहार नहीं करते जैसा कि इनके साथ। सामान्य तौर पर मनुष्य होने के नाते इनके अंदर भी वही भावनाएँ रहती हैं जैसी किसी आम इंसान में। तो हम क्यों इनकी भावनाओं की कद्र नहीं करते?

साहित्य में प्रदीप सौरभ द्वारा लिखी 'तीसरी ताली' नामक किताब ने तो धूम मचाई थी ही किंतु अब लक्ष्मी नारायण सहाय द्वारा लिखी आत्मकथा 'मै लक्ष्मी मै हिजड़ा' ने भी तहलका मचा दिया है। वर्तमान में ऐसे कई उदाहरण है जिन्होंनें 21वीं सदी में किन्नरों की स्थिति पर दोबारा बहस छेड़ दी है फिर चाहे वह महाराष्ट्र की संतोष ही क्यों न हो। जो सब इंसपेक्टर बनी है या फिर बंगाल के एक कॉलेज की किन्नर प्रिंसिपल। इसके अलावा सिल्वी (ब्यूटीशियन) तथा मीणा किन्नर जिसने दीपक नामक राष्ट्रीय स्केटिंग हॉकी खिलाड़ी को पाला तथा इस काबिल बनाया कि वह देश के लिए कुछ कर सके। इन्होंने यह साबित किया है कि किन्नर भी चाहे तो अपनी अलग पहचान बना सकते हैं।

यही नहीं प्राचीन से लेकर वर्तमान के सिनेमा में भी इनके कई अभिनय भी हुए। किंतु बड़े ही दुख की बात है कि ज्यादातर फिल्मों में इन्हें डरावने रूप में ही लोगों के समक्ष रखा गया जैसे-'मर्डर-2', 'संघर्ष' आदि किन्तु 'तमन्ना' अकेली ऐसी फिल्म है जहाँ एक किन्नर की माँ वाली भावनाएँ उजागर हुई। इसके अलावा कुछ छोटी फिल्मों में भी इनके सकारात्मक पक्ष को दिखाया गया है।

वर्तमान में कई विज्ञापनों में भी यह दिखते हैं। दरअसल इन किन्नरों से हमारे समाज को जो सबसे महत्त्वपूर्ण बात सीखनी चाहिए वह है इन्सानियत। वर्तमान समाज में जहाँ हर कोई या तो हिन्दू है या मुस्लिम, सिख है या ईसाई या किसी अन्य धर्म का समर्थक। ऐसे में ये किन्नर केवल किन्नर हैं इनका कोई धर्म नहीं केवल इन्सानियत को छोड़कर। इन्हें न ही हिन्दुओं से सम्मान मिलता है और न ही मुस्लिमों से और न ही किसी अन्य संप्रदाय से। आज समाज में सांप्रदायिक दंगो, राजनीतिक दॉव पेचों या अन्य विमर्शों का दौर है। ऐसे में किन्नर एकदम तटस्थ है क्योंकि इन्हें किसी से भी संवेदना या सहानुभूति की कोई उम्मीद नहीं है। आज हमारे राजनीतिक नेता जहाँ स्त्रियों के लिए शराब बंदी या अन्य उपायों के दावे करते हैं तो वहीं पुरुषों के लिए नौकरी आदि के। किन्तु कोई भी इन किन्नरों के विषय में कुछ नहीं कहता। प्रश्न है क्यों? शायद यह उनका वोट बैंक नहीं है और साथ ही इनकी संख्या भी इतनी नहीं है जितनी अन्य लोगों की। तो प्रश्न उठता है क्या केवल अल्पसंख्यक होने मात्र से इनके अधिकारों तथा सुरक्षित जीवन को जाने दिया जाए? अवश्य ही नहीं, क्योंकि भारतीय नागरिक होने के नाते इन्हें 'गरिमापूर्ण जीवन' जीने का अधिकार है यह बात हमारा सर्वोच्च न्यायालय बखूबी जानता है जिस कारण इन्हें ओ0बी0सी0, अनुसूचित जाति के दायरे में रखते हुए 3: आरक्षण दिया है जो इनकी स्थिति में बदलाव लाने की ओर एक सकारात्मक कदम है। किंतु प्रश्न यह है कि इस ओर ये लोग स्वयं कितने जागरुक हैं और क्या हमारा समाज अब इतना परिपक्व है कि इन्हें भी बाकियों की तरह सम्मान दे सके?

यह बड़े आश्चर्य की बात है कि कई बुद्धिजीवी भी इनके प्रति असंवेदनशील हैं। आज जिस तरह हम प्रत्येक नागरिक की सुरक्षा की बात करते हैं क्या उन नागरिकों में यह किन्नर भी शामिल नहीं हैं। एक सकारात्मक बात यह भी है कि अब कई किन्नरों ने अपना आधार कार्ड व पहचान पत्र (वोटर आई0डी0) बनवाना शुरू कर दिया है जो उनके सुरक्षित जीवन तथा अधिकारों की रक्षा के लिए अत्यन्त आवश्यक भी था। बस जरूरत है तो हमें अपनी सोच इनके प्रति बदलनें की और इन्हें भी एक खुला स्वतंत्र तथा समान भारत में जगह देनें की।

संदर्भः-

1. तीसरी ताली -प्रदीप सौरभ, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली
2. पोस्ट बाक्स नं. 203 नाला सोपारा- चित्रा मूद्गल ,सामयिक प्रकाशन नई दिल्ली
3. मैं लक्ष्मी मैं हिजड़ा -लक्ष्मी नारायण त्रिपाठी, मनोविकास प्रकाशन, मुम्बई
4. 'जनकृति' पत्रिका, मई 2016